चम्पारण सत्याग्रह में महात्मा गाँधी की भूमिका

डा0 सुनिल कुमार
पूर्व शोध छात्र (इतिहास विभाग)
बी0आर0ए0बी0यू0 मुजफ्फरपुर

भूमिका: उपजाऊ जमीन, हरे–भरे जंगल तथा पहाड़ी नदियों से परिपूर्ण, हिमालय की तराई में बसा बिहार का पश्चिमोत्तर सीमांत जिला ''चम्पारण'' पुरातन काल से ग्राम्य–जीवन तथा कृषि आधारित अर्थ–व्यवस्था का पोषक रहा है। यहाँ की जलवायु मनुष्य जाति के लिये भले ही खराब हो, कृषि उत्पादन के लिये अनुकूल है। प्रचुर मात्रा में धान की खेती तथा उसके उत्पादन के कारण चम्पारण में एक कहावत आज भी प्रसिद्ध है– ''अजब देश मंझौआ, जहाँ भात न पूछे कौआ।'' दुनिया के इतिहास की अनेक संघर्षों की तरह चम्पारण का आन्दोलन भी शोषणकारी आर्थिक व्यवस्था की भयंकर बुराइयों के विरूद्ध असंतोष तथा प्रतिरोध का परिणाम था। चम्पारण में यह प्रथा पूँजीवादी व्यवस्था के प्रभाव में वर्षों से कायम थी। इस प्रथा के अंतर्गत गोरे निलहे साहब बड़े पैमाने पर नील की खेती एवं उत्पादन इस क्षेत्र में करते आ रहे थे। उन्हें केवल अपने काम एवं मुनाफा की धुन रहती, इसके लिये उस क्षेत्र के सीधे–सादे एवं गरीब जनता के हितों की वे परवाह नहीं करते। बिहार में जहाँ कहीं भी नील की खेती होती थी, अन्याय एवं भयंकर शोषण का सबसे विकृत रूप दिखायी पड़ता था। निलहे साहब का दीन–हीन रैयतों के साथ व्यवहार लोमहर्षक अत्याचारों की एक लंबी कहानी है।

भारतीय नील की माँग अमरीका स्वतंत्रता संग्राम (1775–1783 ई0) के बाद, यूरोपीय बाजारों में काफी तेज हो गई[1]। कारण था कि अमेरिकी स्त्रोत बन्द हो चुका था। अब नील भारत की अंग्रेजी कम्पनी के आयात की एक प्रमुख मुनाफा कमाने वाली सामग्री बन गयी। मिलबर्न ने 1813 ई0 में लिखा ''नील का स्थान एशियाई माल की सूची में प्रमुख हो गया है। भारत से गैरसरकारी व्यापार का वह एक सर्वप्रमुख माल है।'' 1782 ई0 से 1785 ई0 के बीच तिरहुत के कलेक्टर ''प्रोकोस ग्रेड'' के प्रयास से बिहार में नील काफी विकसित हुआ। उसने इन इलाकों में यूरोपीय तरीके से नील का उत्पादन प्रारंभ किया, नील की खेती को प्रोत्साहित किया एवं नील के कारखानों की स्थापना की। चम्पारण जिला के ''बारा'' में पहली कोठी 1813 ई0 में खुली। उसके बाद पीपरा, तुरकौलिया, मोतिहारी और राजपुर में कुछ और कोठी खुली। बंगाल के नदिया और यसोहर जिले में जहाँ बड़े पैमाने पर नील की खेती होती थी। 1857 ई0 के विप्लव के बाद वहाँ रैयतों ने निलहे यूरोपियनों के विरूद्ध पहली बार आन्दोलन किया। 'हिन्दू–पैट्रियट' के प्रख्यात सम्पादक, हरीशचन्द्र मुखर्जी ने पीड़ित किसानों का पक्ष लिया। इसको लेकर व्यापक उत्तेजना फैली।[2] उस घटना के बाद सरकार ने 1860 ई0 में एक कमीशन नियुक्त किया, जिसको नील संबंधी सभी बातों की जाँच करने का पूरा अधिकार दिया गया।

उत्तर बिहार में यूरोपीय निलहो के द्वारा नील की खेती दो प्रकार से कार्रवाई जाती थी–

1. जीरात
2. आसामीबार

जीरात के अंतर्गत वे अपनी सीधी देख–रेख में अपने हल–बैल की सहायता से नील की खेती कराते थे। इस कार्य के लिये निलहे रैयतों को नियुक्त करते थे और अनेक रैयतों के हल–बैल को अपने लिये सुरक्षित कर लेते थे, बदले में रैयतों को बहुत कम मजदूरी दी जाती थी। अतः उनकी दशा दयनीय बनी रहती और उनमें असंतोष भरा रहना स्वाभाविक था। ''आसामीबार'' व्यवस्था में कोठीवाले साहब रैयतों के द्वारा उन्हीं की खेत में नील को खेती कराते थे। प्रारंभ में इस व्यवस्था के अंतर्गत रैयतों को बीघा पीछे पाँच कट्ठा जमीन पर नील की खेती करनी पड़ती थी। 1867 ई0 के बाद प्रतिशत कम कर दिया गया। अब बीघा पीछे तीन कट्ठा सबसे अच्छी भूमि पर रैयतों को नील बोनी पड़ती थी। यही व्यवस्था को बाद में ''तीन कठिया'' कहा गया। नील की कीमत का निर्धारण निलहे कोठीवाले करते थे। राजेन्द्र प्रसाद ने अपनी पुस्तक ''चम्पारण में महात्मा गाँधी'' में तीन कठिया व्यवस्था को रैयतों के अपार कष्ट का मुख्य कारण बताया है।[3] श्री प्रसाद ने अपनी पुस्तक 'आत्मकथा' में लिखा हैः ''किसी भी रैयत की हिम्मत नहीं पड़ती थी कि वह नील बोने से इंकार करे। अगर कोई हिम्मत करता, तो उसपर हजार तरह के जुल्म करके उसको मजबूर कर दिया जाता। घर और खेत लूट लिये जाते, खेत मवेशियों से चरा दिये जाते, जुर्माना वसूल किया जाता, पीटा भी जाता। इस डर के मारे प्रायः सभी रैयत तीन कठिया मानकर बीघा पीछे तीन कट्ठा नील बो दिया करते।

इस तरह चम्पारण जिला नीली आग में धूँ–धूँकर जल रहा था और किसी में इतनी हिम्मत नहीं थी कि इस तरह के अत्याचारों से निर्धन और निरीह किसानों की रक्षा करें। दूसरी तरफ निलहो ने सरकार पर दबाव डालकर ऐसे कानून पास करा लिये थे, जिसके अनुसार जमींदार रैयत को मनचाही फसल बोने को मजबूर कर सकता था और कोई रैयत इससे छूट पान चाहता, तो उस पर मनमानी लगान बढ़ा दिया जाता। 19वीं शताब्दी के अंतिम दशकों में बेतिया तथा रामनगर राज को कर्ज दिलाकर, निलहे यूरोपियनों ने इन जमींदारों को लीज पर ले लिया था। इस प्रकार चम्पारण के लगभग 46 प्रतिशत भूमि पर निलहो की जमींदारी कायम हो चुकी थी और उन्होंने इस मौके का भरपूर इस्तेमाल अपने आर्थिक विकास के लिये कर रहे थे। संबंधित राज को मालगुजारी की निश्चित राशि देकर कोठीवाले अधीनस्थ किसानों से भरपूर धन वसूला करते थे।

चम्पारण में नील की खेती के विरूद्ध पहला विद्रोह लाल सरैया कोठी में हुआ। सन् 1867 ई0 में कोठी के रैयतों ने नील की बुआई बंद कर दी तथा आस–पास के गाँव वालों से भी नील की खेती न करने की अपील की। निलहे साहबों ने सरकार से अनुरोध किया कि नील की खेती करने संबंधी लिखित शर्त का उल्लंघन करने वाले रैयतों पर कानूनी कार्रवाई करने के लिये मोतिहारी में एक ''स्मौल कॉज कोर्ट'' की स्थापना करायी जाये। पटना के कमीश्नर ने यह जानते हुये कि विद्रोह के जड़ में रैयतों की सबसे बढ़िया जमीन का बेदखल हो जाना है, निलहे यूरोपियनों के आर्थिक हितों की सुरक्षा के लिये मोतिहारी में न्यायालय स्थापित करने का आदेश दे दिया।[4]

चम्पारण जिला के किसानों की स्थिति की ओर बिहार, संथाल–परगना और नागपुर के अखबारों ने ध्यान आकृष्ट किया। बिहार के प्रमुख समाचार पत्र 'बिहारी' के सम्पादक महेश्वर प्रसाद ने भी सरकार का ध्यान रैयतों के कष्टों की ओर दिलाने का प्रयास किया। उन्होंने 1913 ई0 में 'बिहार में प्लाण्टर्स और रैयत' शीर्षक पाँच–छह भागों में लेख प्रकाशित किया। इनमें निलहे साहबों तथा उनके कर्मचारियों के अत्याचार की कड़े शब्दों में भर्त्सना की गयी थी एवं स्थिति में सुधार करने की माँग की गयी थी। लेकिन बिहार के उप–राज्यपाल इससे नाराज हो गये और महेश्वर प्रसाद को सेवामुक्त कर दिया गया।[5]

चम्पारण के एक किसान राजकुमार शुक्ल जो निलहो के अत्याचार से स्वयं पीड़ित थे, लखनऊ अधिवेशन में भाग लिया और गाँधीजी से मिलकर चम्पारण में हो रहे गरीब किसानों पर अत्याचार का पूरा विवरण उन्हें सुनाया। गाँधीजीजी को उनकी बातों पर विश्वास नहीं हुआ, क्योंकि गाँधीजी की धारणा था कि इस तरह के अत्याचार अंग्रेजी राज्य में संभव नहीं।[6] इस विषय पर कांग्रेस में एक प्रस्ताव पेश करने के लिये गाँधीजी से कहा गया, परंतु गाँधीजी ने इससे इंकार कर दिया। गाँधीजी ने ब्रजकिशोर प्रसाद से कहा कि चम्पारण की जनता पर हो रहे अत्याचारों को बिना अपनी आँखों से देखे इस विषय पर वे अपना विचार नहीं दे सकते। वे इस विषय पर प्रस्ताव पेश करें, परंतु उन्हें छोड़ दें।[7] परिणामस्वरूप ब्रजकिशोर प्रसाद ने उत्तर बिहार में भारतीय तथा निलहो के बीच बिगड़े संबंधों की जाँच तथा सुधार संबंधी सुझाव देने के लिये एक समिति बनाने का प्रस्ताव रखा, जिसमें सरकारी और गैर–सरकारी दोनों तरह के संबंध हों।[8] यह प्रस्ताव सर्व–सम्मति से पारित हुआ।

लखनऊ की कांग्रेस से लौटने के बाद चम्पारण के रैयतों ने पं0 राजकुमार शुक्ल द्वारा फिर महात्माजी के पास यह पत्र भेजवाया जो इस प्रकार से थाः–

बेतिया
दिनांक 27.02.1917

मान्यवर महात्मा,

''किस्से सुनते हो रोज औरों के
आज मेरी भी दास्तान सुनों।''

हम अपना वह दुःख जो हमारी 19 लाख आत्माओं के हृदय पर बीत रहा है– सुनाकर आपके कोमल हृदय को दुःखत करना उचित नहीं समझते। बस, केवल इतनी ही प्रार्थना है कि आप स्वयं आकर अपनी आँखों से देख लीजिये, तब आपको अच्छी तरह विश्वास हो जायेगा कि भारतवर्ष के एक कोने में यहाँ की प्रजा जिसकी ब्रिटिश छत्र की सुशीतल छाया में रहने का अभिमान प्राप्त है– किस प्रकार के कष्ट सहकर पशुवत् जीवन व्यतीत कर रही है। हम और अधिक न लिखकर आपका ध्यान इस प्रतिज्ञा की ओर आकृष्ट करना चाहते हैं, जो लखनऊ–कांग्रेस के समय और फिर वहाँ से लौटते समय कानपुर में आपने की थी, अर्थात् मैं मार्च–अप्रैल महीने में चम्पारण आऊँगा। बस, अब समय आ गया है। श्रीमान्, अपनी प्रतिज्ञा को पूर्ण करें। चम्पारण की 19 लाख दुःखी प्रजा श्रीमान् के चरण–कमल के दर्शन के लिये टकटकी लगाये बैठी है और, उन्हें आशा ही नहीं, बल्कि पूर्ण विश्वास है कि जिस प्रकार भगवान श्री रामचन्द्रजी के चरणस्पर्श से अहिल्या तर गयी, उसी प्रकार श्रीमान् के चम्पारण में पैर रखते ही हम 19 लाख प्रजाओं का उद्धार हो जायेगा।[9]

श्रीमान् का दर्शनाभिलाषी

राजकुमार शुक्ल

राजकुमार शुक्ल के इस पत्र से गाँधीजी बहुत प्रभावित हुये और पत्र के उत्तर में उन्होंने लिखा कि हम अप्रैल में कलकत्ता जायेंगे और यह पूछा कि राजकुमार शुक्ल उनसे कहाँ मिलेंगे? गाँधीजी ने यह भी बतलाया था कि कलकत्ता में वे भूपेन्द्रनाथ बसु के घर ठहरेंगे। गाँधीजी के कलकत्ता पहुँचने के पहले ही श्री शुक्ल भूपेन्द्रनाथ बसु के घर पर पहुँच गये। 10 अप्रैल, 1917 ई0 को गाँधीजी बाँकीपुर पहुँचे। राजकुमार शुक्ल उनको राजेन्द्र प्रसाद के घर पर ले गये, लेकिन राजेन्द्र प्रसाद जगन्नाथपुरी गये हुये थे। गाँधीजी की आने की जानकारी मजहरूल हक को लगी, उन्होंने आदरपूर्वक गाँधीजी को अपने घर ले गये। वहाँ से शाम को गाँधीजी मुजफ्फरपुर के लिये चले। मुजफ्फरपुर के लोगों ने गाँधीजी का भव्य स्वागत किया। उनके आने की सूचना पाते ही दूसरे दिन सुबह मुजफ्फरपुर के कुछ वकील रामनवमी प्रसाद, बिन्देश्वरी प्रसाद वर्मा, रामदयालु सिंह इत्यादी गाँधीजी के पास पहुँचे और चम्पारण के रैयतों की दुःख–दर्द भरी कहानी सुनायी। आचार्य कृपलानी के घर पर रहकर जाँच सही ढंग से नहीं हो सकती थी क्योंकि वे सरकारी आवास में रहते थे एवं सरकार से वे लोग भी भयभीत थे, इसलिये गाँधीजी को गया प्रसाद सिंह के घर पर ठहराया गया। मोतिहारी जाने से पहले गाँधीजी ने नीलवर संघ के मंत्री जे0एम0 विल्सन तथा तिरहुत मण्डल के आयुक्त एल0एफ0 मोसर्ड से मुलाकात की। इन दोनों ने गाँधीजी के काम में कोई दिलचस्पी नहीं दिखलायी और उनसे तुरंत तिरहुत छोड़ देने को कहा। नीलवरों के सचिव ने गाँधीजी से कहा कि वे एक बाहरी आदमी हैं और उन्हें निलहो और रैयतों के बीच पड़ने का अधिकार नहीं है। गाँधीजी ने भी विनम्रतापूर्वक जवाब दिया कि वे अपने को बाहरी नहीं समझते हैं और अगर किसान जाँच कराना चाहती है तो उसे ऐसा कराने का पूरा अधिकार है।

15 अप्रैल, 1917 ई0 को गाँधीजी चम्पारण के धरती पर पहुँचे। मोतिहारी आने पर उन्हें बताया गया कि जेसौली पट्टी गाँव में एक धनी किसान को ग्रामीणों ने निलहे गोरों के बहकावे पर लूट लिया है। गाँधीजी दूसरे दिन उस गाँव में जाने का निश्चय किया। निश्चित समय (9 बजे) गाँधीजी रामनवमी प्रसाद एवं धरणीधर प्रसाद को लेकर जसौली पट्टी के लिये पैदल ही चल दिये। यह वैशाख का महीना, प्रचण्ड गर्मी का दिन, किन्तु गाँधीजी ने मौसम की परवाह किये बिना गाँव में जाकर अपनी आँखों से सब कुछ देखने का निर्णय किया ''उनके हृदय में जो आग जल रही थी उसकी तुलना में धूप, धूल और लू कुछ भी नहीं थी।[10] गाँधीजी के लिये गाँव वालों ने एक हाथी की व्यवस्था की थी, उसी हाथी पर 9 मील का सफर तय कर लगभग दोपहर के समय चन्द्रहिया नामक एक गाँव में पहुँचे। इसी गाँव से मोतिहारी कोठी को मुख्यरूप से नील की आपूर्त्ति होती थी। गाँधीजी जब उस गाँव के निवासी से बात कर रहे थे और वह कोठी से सम्बद्ध होने के नाते उसके साहब के दबदबा के विषय में जोर–जोर से उन्हें बता रहा था, उसी समय सादे कपड़े में एक दारोगा साइकिल से आया और गाँधीजी से बोला कि जिलाधिकारी आपसे मिलना चाहते हैं। रामनवमी प्रसाद एवं धरणीधर प्रसाद को जसौली पट्टी में जा कर जाँच करने को कहा और खुद उस दारोगा के साथ बैलगाड़ी पर सवार होकर नगर के लिये प्रस्थान कर दिये। गाँधीजी ने आधी दूरी तय कर ली तब पुलिस उपाधीक्षक उनसे मिला, जो उनके लिये 144 धारा की नोटिस लिये था। उस नोटिस में जिलाधिकारी ने गाँधीजी को आदेश दिया था कि वे अविलम्ब मोतिहारी छोड़कर चले जायें। परंतु गाँधीजी ने उस आदेश को नहीं माना और दण्ड–भुगतने को तैयार हो गये। सरकारी आदेश के उल्लंघन के आरोप में उन पर मुकदमा किया गया एवं 17 अप्रैल को उन्हें एक सूचना दिया गया कि स्थानीय अनुमण्डलाधिकारी के यहाँ तीसरे दिन आज्ञा–उल्लंघन के मुकदमें के सिलसिले में उपस्थित हो।

लोगों से खचाखच भरे अदालत में गाँधीजी ने बड़े गर्व के साथ अपना अपराध स्वीकार किया और अपने कार्य को न्यायोचित साबित करने की कोशिश की। अपने बयान में गाँधीजी ने कहा ऐसा नहीं कि कानून की मर्यादा की रक्षा करना नहीं चाहते, बल्कि वैसा करने का कारण उनकी अन्तरात्मा की आवाज थी। बयान जारी रखते हुये गाँधीजी ने कहा, मैं यहाँ मानवीय तथा राष्ट्रीय सेवा की भावना से प्रेरित होकर आया। मुझे आमंत्रित किया गया था कि मैं यहाँ आऊँ और रैयतों की सहायता करूँ, क्योंकि निलहे उनके साथ उचित व्यवहार नहीं करते। परंतु बिना समस्या का अध्ययन किये मैं उनकी कोई सहायता नहीं कर सकता। इसलिए मैं यहाँ इन समस्याओं का अध्ययन करने आया हूँ जिसमें यथासंभव प्रशासन तथा नीलवरों का सहयोग भी अपेक्षित है। मैं ऐसा विश्वास नहीं करता कि मेरे यहाँ आने से किसी तरह की अशांति उत्पन्न होगी। मैं प्रशासन की कठिनाईयों को भी समझता हूँ। एक कानून की मर्यादा की रक्षा करनेवाले नागरिक की तरह मेरा यह फर्ज होता था कि मैं धारा–144 के आदेश का पालन करूँ, परंतु वैसा मैं अपनी कर्त्तव्य–भावना को चोट पहुँचाये बिना नहीं कर सकता।

यह बात जिलाधीश तक पहुँची तो उसने गाँधीजी से एक दिन का समय माँगा ताकि वह सरकार से दिशा–निर्देश प्राप्त कर सके। उस बीच पटना से पोलक, मजहरूल हक, राजेन्द्र प्रसाद, ब्रजकिशोर प्रसाद, अनुग्रह नारायण सिंह तथा शम्भूशरण मोतिहारी आये और गाँधीजी के जेल जाने के बाद कार्यक्रम पर विचार–विमर्श किया। अगर गाँधीजी जेल चले जाते हैं तो मौलाना मजहरूल हक तथा ब्रजकिशोर प्रसाद आन्दोलन का नेतृत्व करेंगे और उनके जेल जाने के बाद क्रमशः धरणीधर, रामनवमी प्रसाद, राजेन्द्र प्रसाद, अनुग्रह नारायण सिंह शम्भूशरण।

21 अप्रैल को गाँधीजी को फिर कचहरी में हाजिर होना था, परंतु उसके पहले ही जिलाधीश ने संदेश भेजा की उप–राज्यपाल ने उनके खिलाफ मुकदमा को वापस ले लिया है। साथ ही जिलाधीश ने भी गाँधीजी के पास पत्र लिखा कि वे भी जाँच–पड़ताल में उसकी पूरी मदद करेंगे। गाँधीजी के चम्पारण आगमन तथा उनके द्वारा पूर्ण आत्मविश्वास के साथ किये गये सरकारी आज्ञा का उल्लंघन ने समूचे इलाके में तूफान खड़ा कर दिया और भोली–भाली ग्रामीण जनता इस करिश्माई व्यक्ति के दर्शन को व्याकुल हो उठी। उप–राज्यपाल के द्वारा गाँधीजी पर से मुकदमा उठा लेना बिहारवासियों के लिये ही नहीं, बल्कि सम्पूर्ण राष्ट्र के लिए महान विजय था तथा स्वयं गाँधीजी के लिये भारत में सत्याग्रह की पहली जीत।

चम्पारण में गाँधीजी का दूसरा पड़ाव बेतिया था। मोतिहारी में मिली सफलता ने गाँधीजी को मसीहा बना दिया था। जहाँ–जहाँ भी गाँधीजी गये, उनका स्वागत विशाल जन–समूह ने अपनी आशा भरी दृष्टि से की। रैयतों के कष्ट को सही–सही समझने के लिये गाँधीजी ने सबसे पहले उनके हृदय से निलहे गोरे तथा पुलिस–प्रशासन का भय निकाला। अब चम्पारण की रैयत महात्मा गाँधीजी को सबसे बड़ा मददगार समझकर हजारों की संख्या में उनके पास आने लगे। परिणामस्वरूप प्रथम चरण में ही लगभग 25 हजार लोगों ने अपना बयान दर्ज करवाया। इस काम में गाँधीजी को ब्रजकिशोर प्रसाद, राजेन्द्र प्रसाद, आचार्य कृपलानी, रामनवमी प्रसाद, अनुग्रह नारायण सिंह, विन्ध्यवासनी प्रसाद, धरणीधर बाबू, शिवनन्दन राय, गोरख प्रसाद, पीर मुहम्मद और राजकुमार शुक्ल का पूरा सहयोग मिला।

अनुग्रहनारायण सिंह ने लिखा है– 'जैसे–जैसे हमलोगों का बयान लिखने का काम आगे बढ़ता जा रहा था, वैसे–वैसे कोठी वालों के बीच घबराहट बढ़ती जाती थी। अखबारों में लेख निकल रहे थे। दोनों पक्ष के सवाल–जवाब टीका–टिप्पणियाँ छपती थीं। महात्मा गाँधीजी बीच–बीच में कलक्टर और सुपरिंटेंडेंट से मिल भी लिया करते थे। साथ ही बयान की सारी गाथा उन्हें सुनाते थे। कोठीवालों का कहना था कि महात्मा गाँधीजी व्यक्तिगत रूप से बहुत ही अच्छे आदमी है और उनको चम्पारण में रहने से कोई हर्ज नहीं है, पर उनके साथी जो दूसरे–दूसरे जिलों के हैं और खासकर वकालत पेशा करनेवाले हैं, निहायत ही धूर्त है। गाँधीजी के साथ यहाँ रहकर ऐसे लोग अपनी वकालत चलाने के लिये लोगों को झूठ–मूठ का भड़का रहे हैं। महात्मा गाँधीजी उनलोगों को हटा दें तो सब काम शांति से चलता रहेगा। इस बात पर गाँधीजी ने कहा कि उनके किसी भी साथी के विरूद्ध मुनासिब शिकायत सबूत के साथ कही जाये, तो उसको वे अपनी जमात से दूर कर देंगे। लेकिन जबतक ऐसी बात नहीं कही जाती, वे किसी को भी हटाने के लिये तैयार नहीं। परंतु ऐसा कुछ करने को कोठीवाले तैयार नहीं थे।[11]

गाँधीजी ने गाँवों की पैदल यात्रा किया और उन्होंने देखा कि लोगों के आँगन तक नील बोया हुआ था। सिंधाछपरा नामक गाँव में गाँधीजी पहुंचे तो एक विधवा स्त्री अपने चार छोटे बच्चों को लेकर उनके पास पहुँची। बच्चों की उम्र 3 वर्ष से लेकर 10 वर्ष तक के लगभग में थी। उसने रो–रोकर गाँधीजी से अपने सिर का बाल दिखाया और कही कि हुजूर आज से थोड़े दिन पहले कोठी के ठेकेदार मुझे आंगन से सिर का बाल पकड़कर खेत तक ले गया। मैं सहायता के लिये गाँव के लोगों को पुकारती रही, लेकिन मेरी सहायता के लिये कोई नहीं आया। मेरा खेत घर से लगभग बीस बीघा दूर है। वहाँ तक ठेकेदार बाबू मेरा झोंटा खींचते हुये ले गये और मुझसे एवं मेरे दस वर्ष के लड़के से खेत का काम करवाया। मेरा लड़का पढ़ता है और आजतक उसने कभी खेत में काम नहीं किया है।

दूसरी तरफ गाँव के ग्वालों ने गाँधीजी से शिकायत की कि कोठीवाले उनसे दो आने सेर में घी लेते हैं तथा दूध और दही का तो दाम तक नहीं देते है। इन सभी घटनाओं ने गाँधीजी के हृदय को द्रवित कर दिया। उन्होंने गाँव–गाँव घुमकर सात हजार रैयतों के बयान लिये, जिसके आधार पर एक छोटी–सी प्रारंभिक रिपोर्ट तैयार कर बिहार सरकार के पास भेज दी। इस घटना ने निलहे गोरो में काफी खलबली मचा दी।[12] जाँच का काम जैसे–जैसे आगे बढ़ा निलहे यूरोपियनों की घबराहट भी बढ़ी। गाँधीजी को जन समर्थन मिल रहा था उनसे सभी सतर्क थे। खुद गाँधीजी भी अपनी प्रारंभिक सफलता से अचंभित थे। उन्होंने सभी समाचार–पत्र के सम्पादकों को व्यक्तिगत पत्र लिखकर अनुरोध किया था कि वे जाँच–प्रक्रिया चलने तक किसी भी संवाददाता को चम्पारण आने से रोके। खुद उनके ही शब्दों में– ''चम्पारण में स्थिति इतनी नाजुक थी कि किंचित उत्साहपूर्ण आलोचना या अतिरंजित खबरों से सहज ही काम में भारी नुकसान पहुँच सकता था।'' गाँधीजी इस सम्पूर्ण आन्दोलन को राजनीतिक प्रभाव से मुक्त रखना चाहते थे। दूसरी तरफ निलहे यूरोपियनों की संस्था 'बिहार प्लाण्टर्स संघ' ने एक ज्ञापन देकर तिरहुत प्रमण्डल के आयुक्त एल0एफ0 मोर्सेड से शीघ्रताशीघ्र गाँधीजी की जाँच को रोकने का आग्रह किया। उनका आरोप था कि गाँधीजी प्लाण्टर्स तथा जमींदारों के खिलाफ रैयतों तथा खेतिहर मजदूरों को आन्दोलन के लिये प्रेरित कर रहे हैं। ठीक उसी प्रकार की माँग कलकत्ता के 'यूरोपीय डीफेंस एसोसिएशन' ने भी मुजफ्फरपुर शाखा से अनुरोध किया।

लगभग उसी समय महात्मा गाँधीजी को बिहार सरकार का पत्र मिला, जिसमें लिखा था, ''आपकी जाँच काफी लम्बी हो रही है। नहीं हो तो आप इसे बन्द कर दें और बिहार छोड़ दें।'' जवाब में गाँधीजी ने लिखा कि उनकी जाँच का लम्बा होना स्वाभाविक है। परंतु जबतक इससे लोगों को राहत नहीं मिलेगी, तब तक बिहार छोड़कर जाने की उनकी कोई मंशा नहीं है। अब यह सरकार पर है कि जाँच–पड़ताल समाप्त कर रैयतों की शिकायतों का निदान करें।

29 मई, 1917 ई0 को सरकारी पत्र द्वारा गाँधीजी को राँची में बिहार के उप–राज्यपाल एडवर्ड अलबर्ट गेट से मिलने को कहा गया। नये सरकारी पत्र में जो संदेश था उस पर गाँधीजी के सहयोगियों की अलग–अलग राय थी। अधिकांश स्वयंसेवक यह मान बैठे थे कि इस साक्षात्कार के बहाने या तो गाँधीजी भारत रक्षाकानून के अंतर्गत नजरबंद किये जायेंगे अथवा उन्हें राज्य से निष्कासित कर दिया जायेगा। गाँधीजी ने राँची जाने से पहले पटना में एक बैठक की, जिसमें राजेन्द्र प्रसाद, मजहरूल हक, पं0 मदनमोहन मालवीय, ब्रजकिशोर प्रसाद, कस्तूरबा गाँधी तथा देवदास गाँधी सम्मिलित थे। इस बैठक में विस्तृत विचार–विमर्श के बाद यह निर्णय लिया गया कि यदि राँची में गाँधीजी को गिरफ्तार कर लिया गया तो उस परिस्थिति में पं0 मदन मोहन मालवीय तथा मजहरूल हक चम्पारण के जाँच–प्रक्रिया को नेतृत्व करेंगे। किन्तु राँची में ऐसा कुछ नहीं हुआ। लेफ्टिनेंट गवर्नर तथा कार्यकारिणी परिषद् के सदस्यों के साथ गाँधीजी की लगभग तीन दिनों तक बात हुई। उप–राज्यपाल ''एडवर्ड अलबर्ट गेट'' ने गाँधीजी से अनुरोध किया कि वे सरकार की ओर से बनाई जानेवाली जाँच समिति का सदस्य बने। गाँधीजी के लिए धर्म संकट की घड़ी थी, उनकी

हां, और नहीं, दोनों समयोचित नहीं था। 'अन्ततः गाँधीजी ने इस शर्त पर सदस्यता स्वीकार कर ली कि वे अपने सहकर्मियों से सलाह मशवरा करने के लिये स्वतंत्र होंगे, समिति सदस्य होते हुये भी रैयतों की वकालत करेंगे तथा जाँच असंतोषजनक होने पर रैयतों का पथ–प्रदर्शन करने को स्वतंत्र होंगे।

10 जून, 1917 ई0 को सरकार ने जाँच–समिति का गठन कर दिया, जिसके सदस्य मध्य प्रदेश के आयुक्त एफ0जी0 स्लाई बने तथा और सदस्यों में बिहार और उड़ीसा के अधीक्षक और विधि परामर्शी एल0सी0 एडमी, बिहार और उड़ीसा विधान–परिषद् के सदस्य राजा हरिहर प्रसाद नारायण सिंह और डी0जे0 रीड, वित्त विभाग के उप–सचिव जी0 रेनी, सेट्लमेंट पदाधिकारी ई0एल0 टैनर (आई0सी0एस0) तथा मोहनदास कर्मचन्द गाँधी थे। उपराज्यपाल सर एडवर्ड अलबर्ट गेट ने बहुत प्रयास किया कि समिति का प्रतिवेदन सर्वसम्मत हो। समिति के अध्यक्ष तथा गाँधीजी की भी यही इच्छा थी। उपराज्यपाल ने कहा था कि जबतक सर्वसम्मत प्रतिवेदन नहीं दिया जायेगा, तबतक कोई कार्रवाई करने में कठिनाई होगी। जाँच समिति ने लगभग तीन महीने में सर्वेक्षण एवं बैठकों के बाद अपनी रिपोर्ट तैयार की, जिसे 3 अक्टूबर, 1917 ई0 को सरकार के समक्ष रखा गया। समिति ने जितनी भी अनुशंसाएँ की थी, उन्हें स्वीकार कर लिया गया। अन्ततः 18 अक्टूबर को सरकार ने जाँच–समिति की अनुशंसाओं को प्रकाशित किया[13]

जो इस प्रकार से थे–

1. तीन कठिया प्रथा की समाप्ति।
2. नील उपजाने के लिये बंदोबस्ती–सशक्त तथा नियमान्तर्गत।
3. मालगुजारी की दर में 20 से लेकर 26 प्रतिशत की कमी।
4. बेतिया कोर्ट ऑफ वार्ड्स पर 7 वर्षों तक जमाबंदी की वृद्धि पर रोक।
5. यदि बेतिया राज नीलवरों से नगद वसूल करके रैयतों को तावान के रूपये लौटायेगी।
6. अबवाब गैर–कानूनी घोषित तथा वसूली पर रोक।
7. रैयतों के वारिस के नाम का पंजीकरण निःशुल्क किया गया।
8. किरासन तेल की बिक्री के लिये लाइसेंस की आवश्यकता समाप्त।
9. चारागाह के लिये पर्याप्त मैदान छोड़ने की जिम्मेवारी जमींदारों, मोकररीदारों और ठेकेदारों पर।
10. जमींदारों, मोकररीदारों और ठेकेदारों द्वारा रैयतों पर जुर्माना करना तथा उसकी वसूली करना गैर–कानूनी घोषित।
11. गाड़ी का सट्टा 5 वर्ष से अधिक नहीं।
12. मालगुजारी की प्रत्येक किस्त के भुगतान पर रसीद देने का विचार।
13. मजदूरी स्वेच्छा पर आधारित घोषित।
14. फाटकों का ठेका कोठी अथवा ठेकेदार को न देकर, प्रायोगिक तौर पर जिला पार्षदों को दायित्व सौंपा गया।
15. बेतिया–राज में चरसा महाल की समाप्ति पर निर्णय विचाराधीन।[14]

चम्पारण आन्दोलन के परिणामस्वरूप जितने सुधार हुये वे रैयतों के लिये सुखदायक तथा उत्साहवर्द्धक थे। निलहे साहबों के आर्थिक लाभ का मूलाधार–रैयत और खेतिहार मजदूरों का शोषण जाँच–कमिटी की रिपोर्ट के बाद पूर्णतः समाप्त हो गया। ऐसी स्थिति में उनका कारोबार तथा खेती सीमित होती गयी और अन्ततः चार वर्षों के अंदर नीलहे है। कोठी और जमीन बेचकर चम्पारण से चले गये।

निष्कर्षः आज इतिहासकारों ने चम्पारण आन्दोलन को काल, परिवेश और इतिहास लेखन की बदलती प्रवृत्तियों के आलोक में अलग–अलग रूपों में देखा है तथा समीक्षा की है। भारत में गाँधीजी के सत्याग्रह की पहली प्रयोगशाला, पहचान की तलाश में गाँधीजी का पहला जन–आन्दोलन तथा मध्यवर्गीय किसानों के द्वारा आन्दोलन के रंगमंच को तैयारी आदि विचारों तथा मिथकों के बीच चम्पारण आन्दोलन पर आज तक जितने भी लेख, निबंध अथवा पुस्तकें लिखी गयी, वे सब मिलकर किसान आन्दोलन का एक विस्तृत कैनवास तैयार करती है जिसमें बड़े जमींदार, बड़े किसान, मध्य किसान, छोटे किसान, रैयत, खेतिहर, मजदूर, साहूकार, निलहे कोठीवाले, वकील, गुमास्ते तथा ब्रिटिश हुकूमत सभी अपने–अपने राजनीतिक आर्थिक वर्चस्व के लिये एक दूसरे से संघर्षरत दिख पड़ते हैं। सम्पूर्ण आन्दोलन के परिदृश्य से अगर गाँधीजी को अपवाद मानकर हटा दिया जाये तो आज चम्पारण आन्दोलन एक ऐसे आन्दोलन के रूप में सामने आयेगा, जहाँ वर्गीय संघर्ष का आधार दो सामानान्तर शोषक वर्गों के बीच चलने वाला वर्चस्व की होड़ थी।

संदर्भ ग्रंथ सूचीः–

1. प्रसाद, राजेन्द्र – चम्पारण में महात्मा गाँधी। बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पृ0सं0–7
2. टी0पी0 ग्रान्ट का 17 दिसम्बर, 1960 का विवरण बुकलैंड खण्ड–1 पृ0सं0–192
3. प्रसाद, राजेन्द्र वही– पृ0सं0–14
4. दत्त, के0के0 बिहार में स्वतंत्रता आन्दोलन का इतिहास, भाग–1, पृ0सं0–186
5. समाचार पत्र प्रताप, 17 जनवरी, 1916
6. सिंह, अनुग्रहनारायण मेरे संस्मरण, पटना, 1961, पृ0सं0–8
7. गाँधी, एम0के0 दि स्टोरी ऑफ माई एक्सपेरिमेंट्स विथ ट्रूथ, अहमदाबाद (1919), पृ0सं0– 356–57
8. रिपोर्ट ऑफ दि इंडियन नेशनल कांग्रेस, लखनऊ 26–30 दिसम्बर, 1916 पृ0सं0–68–69
9. प्रसाद, राजेन्द्र– पूर्वोद्धत पृ0सं0–81
10. प्रसाद, राजेन्द्र– सत्याग्रह इन चम्पारण पृ0सं0–105
11. सिंह, अनुग्रहनारायण मेरे संस्मरण, पृ0सं0–15
12. गाँधी, एम0के0 चंपारण एगरेरियन कमिटी रिपोर्ट, खंड–1,पृ0सं0–190
13. गाँधी, एम0के0 पूर्वोद्धत पृ0सं0–403–404
14. दत्त, के0के0 पूर्वोद्धत पृ0सं0 275–76